गाजियाबाद
३ जुलाई, २००६

संदेश संख्या – १७१

गुरू धाम

(संदेश १७० का उपसंहार जो एक शिष्य के शरीर में घटित हुआ)

''गुरु–धाम'' शब्द को साधारणतः गुरू–व्यक्तित्व के आवास के रूप में समझ जाता है । लेकिन इस शरीर में जो समझदारी घटित हुई, वह यह नहीं है। यह सत्य है कि गुरू का स्पर्श मौलिक परिवर्तन लाता है और ऐसे गुरू का निवास स्थान भी पवित्रतम मन्दिरों से किसी भी अर्थ में कम नहीं है, फिर भी यह समझ में आया कि इस शब्द का मर्मार्थ अत्यन्त गहरा है । तब गुरू–प्रक्रिया की पूजा का दूसरा ही अर्थ समझ में आया और 'सत्यलोक' सर्वोत्तम मन्दिर हो गया ।

गुरू–धाम

यह गुरुधाम ईंट–गारे से निर्मित गुरू आवास नहीं है,
यह तो वह दिव्य शान्ति है जो वहाँ घटित होती है ।
'सत्यलोक' मंदिर में रखी मूर्त्तियाँ, मूर्तियाँ नहीं हैं,
वह तो है ब्रह्माण्ड की सम्पूर्ण ध्यानशीलता ।
न पूजा की वस्तुएँ और न ही पुजारी,
यह तो है वह पूजा जहाँ कोई पुजारी नहीं ।
कोई अवधारणा नहीं, अनुमान नहीं, निष्कष नहीं,
यह तो है स्वतःस्फूर्त शान्त स्थिरत्व ।
न ताप का अनुभव और न ही शीत का,
यह तो है स्वयं उष्णता और शीतलता ।
आग ताप का अनुभव नहीं करता, न ही बर्फ शीत का,
नहीं देखता प्रकाश चमक, और न ही अंधकार देखता अंधेरा ।
मुक्ति तभी है जब उसका कोई अनुभवकर्त्ता नहीं,
जीवन खिलता तभी है जब उसके बारे में कोई विचार नहीं ।
केवल एक 'स्पर्श' का बोध होता है, आशीर्वाद है घटित हो जाता,
हो जाता है सजगता में विस्फोट और वही है निष्कपटता ।
क्या सौन्दर्य है? क्या सौन्दर्य है? क्या सौन्दर्य है?
प्रेम की उर्जा और समझदारी की ऊर्जा,
अकथनीय के कथन हेतु प्रयुक्त हैं ये शब्द ।
यही है गुरु धाम, यही परमधाम ।